59

परिचय (14:1-15:13):

जब मसीही लोग असहमत होते हैं

(14:1-4)

मुझे शांति और सुलह पसन्द है। मैं चाहता हूं कि हर कोई दूसरे हर व्यक्ति से सहमत हो ताकि सभी लोग मिल-जुलकर शांति से रह सकें। इसके साथ ही मैं इस बात को समझता हूं कि यह एक अवास्तविक इच्छा है। जहां भी मानवीय जीव रहते हैं, वहां असहमतियां हो ही जाती हैं। यह बात न केवल संसार में, बल्कि कलीसिया में भी सत्य है। प्रश्न यह नहीं है कि "*यदि* हम सहमत हों तो क्या करें?" बल्कि यह है कि "*जब* हम असहमत हों तो क्या करें?" जब हमारे अन्दर विचार के मतभेद हों तो हमें कैसे व्यवहार करना चाहिए?

रोमियों 14:1-15:13 में पौलुस ने इस विषय पर विस्तार से चर्चा की। रोमियों 12 से आरम्भ करते हुए आमतौर पर एक विषय पर कुछ आयतें लेते हुए प्रेरित ने कई विषयों को लिया, परन्तु इस प्रश्न पर चर्चा करने के लिए कि जब हम सहमत नहीं होते तब हमें अन्य मसीही लोगों के साथ कैसे काम करना चाहिए, के प्रश्न पर एक अध्याय से अधिक यानी छत्तीस आयतें ली हैं।

इस चर्चा के इतना लम्बा होने के कारण कुछ टीकाकारों ने निष्कर्ष निकाला है कि यहूदी मसीहियों और अन्यजाति मसीहियों के बीच मुख्य समस्याएं थीं[1] और रोमियों के नाम पत्र लिखने का पौलुस का मुख्य कारण यही था।[2] रोम में पौलुस के कई जानने वाले थे (रोमियों 16:3, 5-15) जिस कारण उसे वहां पाए जाने वाले झगड़े की खबर होगी। परन्तु यह उतना नहीं है, जितना पौलुस ने अपनी यात्राओं में कई जगह में तनाव को झेला था, जिसका विवरण हमारे वचन पाठ में दिया गया है। इसलिए उसे उन समस्याओं को रोकने के लिए जो खड़ी हो सकती हैं, यह निर्देश शामिल करने की आत्मा द्वारा गवाही दी गई थी।

वचन लम्बा है और कई बार इसकी विस्तृत व्याख्या की आवश्यकता पड़ेगी, इसलिए मैंने इसे छोटे भागों में बांटा है जिससे इसे अच्छी तरह समझाया जा सके। इस आरम्भिक पाठ में हम पृष्ठभूमि के मसलों पर चर्चा करेंगे और संक्षेप में 1 से 4 आयतों की समीक्षा करेंगे।

परेशान करने वाली समस्याएं

स्थिति?

वचन के अपने अध्ययन को आरम्भ करने से पहले हमें कुछ चुनौतियों को समझना आवश्यक है, जो हमारे सामने आएंगी। पहली बड़ी चुनौती यह है कि हम उस स्थिति के बारे में ठीक-ठीक नहीं जान सकते कि पौलुस ने यह चर्चा क्यों की। पौलुस को यह स्थिति स्पष्ट थी और मान लेते हैं कि रोम में उसके पाठकों को भी स्पष्ट था, परन्तु हमें नहीं है। इसमें मांस खाने (14:2, 21), विशेष दिनों को मनाने (14:5) और किसी तरह दाखरस पीने की बात (14:21) शामिल

है। परन्तु इस बात में सहमति की कमी है कि संक्षेप में पौलुस के दिमाग में क्या था। इसके साथ इस पर भी असहमति जुड़ जाती है कि कौन ''बलवान'' भाई था (15:1) और कौन ''निर्बल'' भाई (14:1, 2; 15:1)।

कई लोगों का विश्वास है कि रोमियों 14 के सब उदाहरणों में, ''निर्बल'' भाई वे यहूदी मसीही थे, जो अभी भी पुराने नियम की व्यवस्था के अवशेषों से चिपके हुए थे। दिनों के सम्बन्ध में वे अभी भी यहूदी कैलेंडर को ही मानते थे। मांस खाने के सम्बन्ध में रोम जैसे मूर्तिपूजक समाज में उन्हें पता नहीं था कि बाज़ार में खरीदा गया किसी भी तरह का मांस कोशर होता था।[3] सुरक्षित ढंग अपनाते हुए वे शाकाहारी बन गए थे।[4] इस ढंग के अनुसार, ''बलवान'' भाई अन्यजाति मसीही थे और कुछ एक पौलुस जैसे जागृत यहूदी मसीही।

मुझे यह भी बताना चाहिए कि इस विचार को मानने वाले यह ज़ोर देते हैं कि रोमियों 14 में और 1 कुरिन्थियों 8-10 में ऐसी ही चर्चा में, जो मूर्तियों को बलिदान किए मांस को खाने के विषय में है, कोई सम्बन्ध है। दोनों वचनों में समानताएं मानने के बावजूद, वे मुख्य अन्तरों की ओर ध्यान दिलाते हैं।

अभी बताया गया ढंग हो सकता है कि सही हो, परन्तु मुझे यह निष्कर्ष निकालने में दिक्कत होती है कि अपने पत्र में यहां पौलुस ने यहूदी मसीहियों को ''निर्बल'' समूह और अन्यजाति मसीहियों को ''बलवान'' समूह का नाम दिया। इसके अलावा मुझे लगता है कि 1 कुरिन्थियों 8-10 के साथ सम्भावित सम्बन्ध कुछ जल्दी ही टूट जाता है। आखिर पौलुस कुरिन्थुस से लिख रहा था। जहां उसे मसीही लोगों के मूर्तियों को बलिदान किए हुए मांस खाने से पैदा समस्याओं का बार-बार ध्यान दिलाया जाता होगा।

जहां तक मुझे पता है, पुराने नियम के खाने पीने के नियमों को मानने वाले यहूदी लोग कोशर मांस के लिए अन्यजातियों के मांस के बाज़ार पर निर्भर नहीं थे, बल्कि वे व्यवस्था तथा अपनी परम्पराओं में बताए नियमों के अनुसार स्वयं काटते और तैयार करते थे। इसलिए यह हो सकता है कि मांस खाने से परहेज करने वाले लोग अन्यजाति मसीही ही हों, जो इस बात को अच्छी तरह से जानते थे कि बाज़ार में बिकने वाला कुछ मांस पहले मूर्तियों को चढ़ाए मांस का हिस्सा था।

ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जो हमें यह निष्कर्ष निकालने पर बाध्य करता हो कि पौलुस ने बताए इन सभी मुद्दों पर एक समूह को ''बलवान'' और दूसरे को ''निर्बल'' कहा हो। यह हो सकता है कि उसने एक विषय जान-बूझकर चुना हो जिस पर यहूदी मसीही ''निर्बल'' लगते हों (दिनों को मानना) और इस विषय जिस पर अन्यजाति मसीही अधिक ''निर्बल'' लगते हों (मांस न खाना)। ऐसा ढंग ''हम *तुम* से आत्मिक रूप में अधिक बलवान हैं'' के विचार को निकाल देगा। (यदि हम अपने साथ ईमानदार हैं तो हम में से अधिकतर को यह मानना पड़ेगा कि कई मुद्दों पर हम ''बलवान'' हो सकते हैं, परन्तु यह भी हो सकता है कि हम दूसरे मुद्दों पर ''निर्बल'' हों।)

हम इस पर हठधर्मी नहीं हो सकते कि रोमियों 14:1-15:13 में पौलुस के मन में सही-सही कौन सी स्थिति थी। रिचर्ड ए. बेटे ने लिखा है, ''सौभाग्य से इस भाग में पौलुस की शिक्षा पर निष्पक्ष समझ के लिए उन मसीही लोगों की सही-सही पहचान होना आवश्यक नहीं है, जो पौलुस के मन में थीं।''[5] वचन में से देखते हुए, मैं सम्भावनाओं की चर्चा करूंगा, परन्तु हमें इस बात में सावधान रहना होगा कि मान्यताओं के आधार पर कोई निष्कर्ष न निकालें।

प्रासंगिकता ?

एक और सवाल खड़ा होता है कि यदि इसकी कोई प्रासंगिकता है तो हम क्या प्रासंगिकता बना सकते हैं ? रोमियों 14 और 15 में गड़बड़ी चाहे कोई भी हो, पौलुस पहली सदी की समस्याओं से निपट रहा था, जो लगता है कि हमारी आज की समस्याओं से अलग नहीं हैं। क्या इसमें हमारे लिए कोई संदेश है ? हां। यदि हर युग के लिए संदेश न होता तो पवित्र आत्मा ने इस वचन को सम्भालना नहीं था। इक्कीस्वीं सदी के लिए इसमें क्या संदेश है ?

वर्षों से, मैंने रोमियों 14 का इस्तेमाल कई गतिविधियों और विश्वासों को सही ठहराने के लिए करते सुना है। उदाहरण के लिए, कुछ लोग ज़ोर देते हैं कि रोमियों 14:1 का अर्थ है कि हमें किसी को भी जो मसीह में विश्वास करता है, स्वीकार कर लेना चाहिए, चाहे वह जो भी विश्वास या व्यवहार करता हो। बहुत बार इस वचन का इस्तेमाल उन नैतिक व्यवहारों को सही ठहराने के लिए किया गया है, जो संदेह के दायरे में हैं। जब मैं लड़का था, तो मैंने आयत 21 के KJV के शब्दों (''offended'') का इस्तेमाल इस प्रकार सुना था: जो आप कर रहे हैं, वह मुझे पसन्द नहीं है। इससे मुझे *ठोकर लगती* है, सो पौलुस की शिक्षा के अनुसार आपको ऐसा करना बंद कर देना चाहिए! वचन में से रास्ता बनाते हुए मैं इन में से कुछ अस्पष्ट प्रासंगिकताओं पर बात करूंगा।

प्रासंगिकता के बारे में शायद सब से महत्वपूर्ण बात जो मैं कह सकता हूं वह यह है कि यह वचन *विचार की भिन्नताओं पर* व्यवहार करने के ढंग से निपटता है। NASB के आरम्भ में अध्याय 14 पर इसका संकेत है: ''अब उसे जो विश्वास में निर्बल है, ग्रहण कर लो; परन्तु उसके विचारों पर निर्णय देने के लिए नहीं'' (आयत 1)।[6] ''उसके विचारों पर'' वाक्यांश का अनुवाद एक यूनानी शब्द से किया गया है, जो इस आयत में, ''छोटी-छोटी बातों की चिंता'' का संकेत देता है।[7] लेखक इस विचार को व्यक्त करने के लिए कि यह वचन विचार के मामलों के सम्बन्ध में है, जिसमें ''आकस्मिक,'' ''गैर अनिवार्य,'' ''गौण मसलों,'' ''नगण्य मसलों'' और ''महत्वहीन मसलों'' सहित कई शब्दों और वाक्यांशों का इस्तेमाल करते हैं।

नये नियम की मसीहियत की बहाली के लिए समर्पित लोग हमेशा से ''विश्वास की बात'' (जो वचन में स्पष्ट सिखाई गई है और ''विचार की बात'' जिसके विषय में वचन कोई स्पष्ट निर्देश नहीं देता) में अन्तर को मानते हैं। बीते समय में ''विश्वास, एकता के मामलों में; विचार, स्वतन्त्रता के मामलों में; और सब बातों, प्रेम में''[8] एक उद्देश्य सुना जाता था। रोमियों 16:17 में पौलुस ने समझाया कि हमें *विचार* की बातों पर असहमति से कैसे निपटना चाहिए। हमारा वर्तमान वचन पाठ इस बात पर ध्यान देता है कि हमें *विचार* की बातों में कैसे व्यवहार करना चाहिए।

मैंने जो भी टीका देखा है उसमें इस बात पर सहमति पाई जाती है कि रोमियों 14:1-15:13 की प्रासंगिकता विचार की बातों से मेल खाती होनी आवश्यक है। उदाहरण के लिए, डग्लस जे. मू ने लिखा है कि ''यहां *सब* मुद्दों के लिए जिस सहनशीलता की मांग पौलुस कर सकता है, वह हम नहीं दे सकते। ... हमें रोमियों 14:1-15:13 वाली सहनशीलता को वैसे ही मुद्दों पर लागू करने के लिए जिनकी बात यहां पौलुस ने की, सावधान रहना आवश्यक है।''[9] इसके साथ अधिकतर लेखक शिक्षा सम्बन्धी तथा नैतिक मुद्दों की अपनी सूचियों सहित जिन्हें वे विचार की बातें मानते हैं, का विरोध नहीं कर सकते।[10] उनकी सूचियों में शिक्षा सम्बन्धी मुद्दे हैं, जैसे डुबकी द्वारा बपतिस्मा होना चाहिए या नहीं और नैतिक मुद्दे जैसे जुआ।

रोमियों 14 को लागू करते हुए लोगों के लिए वह *मानना* आम बात है जिसे उन्होंने *साबित* करना हो। इसलिए वे *मान लेते* हैं कि यह या वह मुद्दा विचार की बात है और फिर इस पर रोमियों 14 को लागू करते हैं। रोमियों 14 के नियमों को किसी भी मुद्दे पर कठोरता से लागू कराने से पहले, यह पता लगाना मुश्किल है कि वह मुद्दा विचार ही की श्रेणी में ही आता हो। यह आसान नहीं है। कई मसीही अधिकतर मुद्दों को विश्वास के मामले मानते हैं, जबकि अन्य मसीही यह मानते हैं कि वे विचार के मामले हैं।

क्या इसका अर्थ यह है कि रोमियों 14:1–15:13 आज हमें कुछ नहीं कहती? कदापि नहीं। कलीसिया में *कई बार* हम विश्वास के मामलों सहित कई मुद्दों पर असहमत होते हैं, परन्तु *कई बार* हम उन मामलों में भी असहमत होते हैं, जिनमें अधिकतर भाग लेने वालों को (कुड़कुड़ाते हुए) मानना आवश्यक है कि वे विचार के क्षेत्र में आते हैं। अपने जीवन काल में, मैंने कुछ एक शिक्षा सम्बन्धी मुद्दों को कलीसियाओं में फूट डालते देखा है। इसी दौरान मैंने विचार के मामलों पर मण्डलियों की एकता सैकड़ों बार खत्म होते देखी है।

उदाहरण के लिए, किसी विशेष कार्य के लिए कलीसिया के भण्डार में से धन खर्च करने का निर्णय लिया जाता है। और कुछ लोग मज़बूती से (और शोर मचाकर) विरोध करते हैं कि यह प्रभु के धन की बेशर्मी से फिजूल खर्ची है। फिर, मण्डली के ऐल्डर यह निर्णय लेते हैं कि नये प्रचारक को लाना चाहिए और जो पुराने प्रचारक को पसन्द करते हैं, वे विद्रोह करने लगते हैं। शायद आप ऐसे प्रश्नों की जिन्हें दोनों पक्ष विचार के क्षेत्र का झगड़ा मानते हों, असहमति के अपने उदाहरण दे सकते हैं। ऐसी परिस्थितियों में ही रोमियों 14 सबसे अधिक सहायक है। यह वचन कलीसिया में पाई जाने वाली असहमति का हर समाधान नहीं कर सकता; परन्तु यदि इसे माना जाए तो यह उनमें से कइयों का समाधान कर सकता है।

इतना कहने के बाद मैं मानता हूं कि हम इस वचन से कुछ *सामान्य* नियम ले सकते हैं, जो हमें किसी भाई के साथ *किसी भी* समय असहमत होने पर अगुआई देते हैं। इसे विचार का मामला मानें या विश्वास का प्रश्न। ऐसे भी नियम हैं, जो अन्य लोगों के साथ असहमत होने पर *कभी भी* सहायक हो सकते हैं, स्थिति चाहे जो भी हो। यहां मिलने वाले नियम न केवल कलीसियाओं की सहायता करते हैं, बल्कि विवाहों, परिवारों और समुदायों में भी सहायक हो सकते हैं। रोमियों 14 के अपने अध्ययन को पूरा करने के बाद मैं कई बह-उद्देश्य नियम दूंगा जिनमें कुछ अन्तिम टिप्पणियां और सुझाव होंगे (इस पुस्तक में आगे ''बिना अलग हुए असहमत होना'' पाठ देखें)।

मूल प्रस्तावना (14:1-4)

अब हम अपने वचन पाठ का परिचय देते हैं। यह वचन स्वाभाविक रूप से तीन भागों 14:1–12; 14:13–23; और 15:1–13 में बंट जाता है। इन भागों के मुख्य विचारों को इस प्रकार संक्षिप्त किया जा सकता है: (1) एक-दूसरे को ग्रहण करो (14:1), (2) एक दूसरे को सुधारो (देखें 14:19) और (3) एक-दूसरे को प्रसन्न करो (देखें 15:2)। इस पाठ का शेष भाग 14:1-4 पर केन्द्रित होगा। इन आयतों में हम पूरे भाग की मूल प्रस्तावना (जो पहले भाग का विषय भी है) देखेंगे। वचन का आरम्भ होता है, ''जो विश्वास में निर्बल है, उसे अपनी *संगति में ले* लो'' (14:1क)। बाद में इस भाग के अन्त में, हम पढ़ेंगे, ''इसलिए, जैसा मसीह ने भी परमेश्वर की

महिमा के लिए तुम्हें *ग्रहण किया* है वैसे ही तुम भी एक-दूसरे को *ग्रहण करो*'' (आयत 15:7)। इस पाठ के शेष भाग में हम पहले पौलुस द्वारा बताई असहमति को देखेंगे और फिर विचार करेंगे कि ''एक-दूसरे को ग्रहण'' करने का क्या अर्थ है।

असहमति (आयतें 1, 2)

पौलुस ने आरम्भ किया, ''जो विश्वास में निर्बल है, उसे अपनी संगति में ले लो; परन्तु उस की शंकाओं पर विवाद करने के लिए नहीं'' (14:1)। पहला प्रश्न जो खड़ा होता है वह यह है कि '' 'विश्वास में निर्बल' से पौलुस का क्या अभिप्राय है?'' यूनानी धर्मशास्त्र में आयत 1 में ''विश्वास'' शब्द से पहले एक निश्चय उपपद है (देखें KJV; मेकोर्ड)। नये नियम में यीशु पर केन्द्रित शिक्षा के लिए आमतौर पर ''विश्वास'' शब्द का इस्तेमाल किया गया है (उदाहरण के लिए देखें गलातियों 1:23)। इसलिए ''विश्वास में निर्बल'' का संकेत उस मसीही के लिए हो सकता है, जिसे वचन की कम जानकारी हो या जो नया चेला हो। निश्चय ही जिन्हें ''विश्वास में निर्बल'' कहा गया है, उन्हें मसीह में उस स्वतन्त्रता की समझ नहीं थी, जो नये नियम में बताई गई है।

परन्तु वचन में आगे हम देखेंगे कि इस वचन में पौलुस ने स्पष्टतया ''विश्वास'' शब्द का इस्तेमाल किसी हद तक शेष पत्र में इस्तेमाल से अलग किया। उदाहरण के लिए, पौलुस ने कहा, ''तेरा जो विश्वास हो, उसे परमेश्वर के सामने अपने ही मन में रख'' (आयत 22क)। अन्य शब्दों में अपने ''विश्वास'' को निजी रख। पौलुस मसीही लोगों को *यीशु में* अपने विश्वास को अपने तक रखने के लिए *कभी नहीं* कहता, सो यहां पर ''विश्वास'' का अर्थ अवश्य ही अलग होगा। ''विश्वास'' का अनुवाद *pistis* से किया गया है जिसका मूल अर्थ पूरी तरह से मानना या विश्वास करना है।[11] यह बात कि किसके बारे में माना गया है इस शब्द में नहीं है; यह अवश्य संदर्भ से ही मिलती है। रोमियों के नाम पत्र के अधिकतर भाग में पौलुस ने ''विश्वास'' का इस्तेमाल यीशु मसीह में विश्वास के लिए किया; परन्तु रोमियों 14 में इस शब्द का अर्थ मुख्यतया विचाराधीन विषय के बारे में *मज़बूत निजी विश्वास* के लिए किया गया है।

यह मज़बूत निजी विश्वास परमेश्वर के वचन या वचन की कुछ समझ के आधार पर हो सकता है। यह इस आधार पर हो सकता है कि किसी को जीवन भर क्या सिखाया गया है या किसी जानकारी के आधार पर या गलत जानकारी के आधार पर जैसे भी हो जिसे विश्वास होता है, वह सच्चे मन से मानता है कि यह सही है।

तो फिर इस वचन में ''विश्वास में *निर्बल*'' का अर्थ है कि किसी विशेष विश्वास में कोई भाई चाहे जितना भी सच्चा हो, परन्तु कई बार अपने विश्वास में वह *गलत* होता है। जो ''विश्वास में *बलवान*'' है वह जिसका विश्वास इस विशेष मुद्दे पर *सही* है।

आयत 2 में यह चर्चा जारी रहती है: ''एक ['बलवान' भाई] को विश्वास [पक्का विश्वास] है कि सब कुछ खाना [मांस सहित] उचित है, परन्तु जो विश्वास में निर्बल है, वह साग-पात ही खाता है।'' कई लोग स्वास्थ्य कारणों से मांस से परहेज करते हैं, परन्तु यह आयत स्वास्थ्य से सम्बन्धित नहीं है, बल्कि धार्मिक संदेहों की चर्चा करती है। जैसा पहले कहा गया था कि शाकाहारी यहूदी मसीही हो सकते हैं, जो गैर-कोशर मांस खाने से इनकार करते थे। शायद

शाकाहारी लोग अन्यजाति मसीही थे, जो इस बात से परिचित थे कि बाज़ार में बिकने वाला कुछ मांस मूर्तियों को चढ़ाया गया है।

मूर्तियों के सामने चढ़ाया गया मांस बाज़ार में कैसे आ गया? मूर्तियों की पूजा करने वाला उपासक जानवर को मन्दिर में ले जाता था, जहां इसे मूर्तियों के सामने अर्पित किया जाता था। पुरोहित जानवर को काटकर चुनिंदा टुकड़े वेदी पर रख देता था, रह गए भाग को वह पुरोहित अपने लिए रख लेता था और शेष को आमदनी के स्रोत के रूप में बाज़ार में बेच देता था। अन्यजाति मसीही के लिए जिनका पालन-पोषण मूर्तिपूजा के माहौल में हुआ था मूर्तियों के साथ अपने सम्बन्ध पर विचार किए बिना इस मांस को खाना कठिन था (देखें 1 कुरिन्थियों 8:7)।[12] बीच का रास्ता ढूंढ़ते हुए उनमें से कइयों ने मांस खाना छोड़ दिया।

यदि ''निर्बल'' भाई व्यवस्था का पालन करने वाला यहूदी था, तो ''बलवान'' भाई वह था जिसे समझ थी कि मसीही लोग अब मूसा की व्यवस्था के अधीन नहीं हैं (देखें रोमियों 7:4, 6)। कोशर की शर्तों को पूरा करने के लिए मांस की आवश्यकता नहीं थी। यदि ''निर्बल'' भाई अन्यजाति मसीही था जो मूर्तियों के सामने अर्पित किए गए मांस पर अधिक ही ध्यान देता था, तो ''बलवान'' भाई वह था जिसे समझ थी कि मूर्ति अपने आप में कुछ नहीं है (देखें 1 कुरिन्थियों 8:4) और इसलिए मूर्ति के सामने किया गया वह बलिदान किसी प्रकार से मांस को प्रभावित नहीं करता। रोमियों 14 में थोड़ा आगे पौलुस ने कहा कि ''कोई वस्तु [भोजन] अपने आप से अशुद्ध नहीं'' (आयत 14; देखें मरकुस 7:19)। तीमुथियुस के नाम अपने पहले पत्र में पौलुस ने ''भोजन की ... जिन्हें परमेश्वर से सृजा'' बात की और कहा कि ''परमेश्वर की सृजी हुई हर एक वस्तु अच्छी है, और कोई वस्तु अस्वीकार करने के योग्य नहीं; पर यह कि धन्यवाद के साथ खाई जाए'' (1 तीमुथियुस 4:3, 4)। मांस खाने के विषय में, ''बलवान'' भाई को यह समझ थी, जबकि ''निर्बल'' भाई को इस मामले में ज्ञान और समझ की कमी थी (देखें 1 कुरिन्थियों 8:7)।

रोमियों 14:1-15:13 में ''विवेक'' के लिए यूनानी शब्द (*suneidesis*) नहीं मिलता, परन्तु उसकी अवधारणा है। NLT में 14:2 में ''जो निर्बल है'' को ''जिसका विवेक संवेदनशील है'' कहा गया है।[13] ''निर्बल'' भाई विवेकपूर्ण ढंग से मांस नहीं खा सकता, जबकि ''बलवान'' भाई का विवेक इसके खाने से खराब नहीं होता।

चुनौती (आयतें 1, 3, 4)

1. *नियम।* जब हम विवेकपूर्ण ढंग से विचार के मामलों में असहमत होते हैं, तो हमें एक-दूसरे से कैसे व्यवहार करना चाहिए? पौलुस ने पहले ''बलवान'' भाई को चुनौती दी कि ''जो विश्वास में निर्बल है, उसे अपनी संगति में ले लो'' (14:1क)। ''संगति में ले लो'' वाक्यांश *proslambano* से लिया गया है, जो ''अपने साथ ले लेना'' (*pros* [''के लिए''] के साथ *lambano* [''लेने के लिए'']) का संकेत देता है। यह ''*स्वागत* का सुझाव देते हुए प्राप्तकर्त्ता की ओर से विशेष रुचि'' का संकेत देता है।[14] उन्हें अपनी संगति में स्वीकार कर लो, कुड़कुड़ाते हुए या हिचकिचाते हुए नहीं, बल्कि खुली बाहों और दिल से।

पौलुस ने आगे कहा, ''परन्तु उसकी शंकाओं पर विवाद करने के लिए नहीं'' (आयत 1ख)। अन्य शब्दों में, उसे अपनी संगति में केवल इसलिए न बुलाओ कि आप उसे यह जानने का

अवसर दे सकें कि वह गलत कैसे है। JB में ''बिना कोई विवाद आरम्भ किए ... उसका स्वागत'' करने को कहता है। एक उदाहरण ध्यान में आता है। एक धार्मिक गुट पर विचार करते हैं, जो यह सिखाता है कि गुरुवार के दिन मांस खाना गलत है। कल्पना करें कि आप किसी व्यक्ति को सिखाकर उसे बदलते हैं जिसका पालन-पोषण उस शिक्षा में हुआ था। उस व्यक्ति के बपतिस्मे के पानी में से बाहर आने पर क्या आप उसे गुरुवार के दिन मांस खाने से इनकार करने की मूर्खता पर भाषण देने के लिए एक ओर ले जाएंगे? बेशक नहीं। वह मसीह में नन्हा बालक है, जिसे गले से लगाने की आवश्यकता है, न कि बातों से उसके मुंह पर थप्पड़ मारने की। समय बीतने पर उसे इस मामले पर आत्मिक समझ मिल जाएगी, परन्तु पहली बार उसे स्वीकार किया जाना आवश्यक है।

2. *प्रासंगिकता।* किसी भाई को स्वीकार करने की चुनौती 15:7 में सब मसीही लोगों को शामिल करने के लिए विस्तार से बताई गई है, वह भाई चाहे ''बलवान'' हो या ''निर्बल।'' ''बलवान'' के लिए ''निर्बल'' को ग्रहण करने का क्या अर्थ है और ''निर्बल'' के लिए ''बलवान'' को ग्रहण करने का क्या अर्थ है?

आयत 3 में पौलुस ने पहले ''बलवान'' से बात की: ''[मांस] खाने वाले न खाने वाले को तुच्छ न जानें'' (14:3क)। ''तुच्छ न जानना'' एक मज़बूत शब्द (*exoutheneo*) से लिया गया है जिसका अर्थ ''बुरी तरह से तुच्छ जानना'' अर्थात किसी दूसरे के साथ ऐसे व्यवहार करना जैसे वह हो ही न (*ex* ["बाहर"] के साथ *oudeis* ["कोई नहीं"])।[15] मैंने कुछ लोगों की पुस्तकें पढ़ी हैं, जिन्हें लगता है कि वे दूसरे मसीही लोगों से अधिक ज्ञानी हैं। उन पुस्तकों में से घृणा और ताने ही दिखाई देते हैं। क्या आप इस बात पर अपने आप को दूसरे से ''बलवान'' समझते हैं? पौलुस ने आप से कहा है, किसी भाई को जो आप से सहमत न हो ''तुच्छ न जानें।''

फिर पौलुस ने अपना ध्यान उनकी ओर मोड़ा जिनको ''निर्बल'' का नाम दिया गया: ''और [मांस] न खाने वाला खाने वाले पर दोष न लगाए'' (आयत 3ख)। अध्याय 14 में पौलुस ने दोष लगाने के बारे में काफ़ी कुछ कहा (देखें आयतें 1, 3, 4, 10, 13[16])। ''दोष'' शब्द के *krino* से लिया गया है, जिसका अर्थ ''निर्णय करना,''[17] अर्थात न्याय करना है। *Krino* का अर्थ हमेशा नकारात्मक अर्थ में नहीं हुआ है। उदाहरण के लिए रोमियों 14 में आयत 5 में इसका अनुवाद ''मानता'' हुआ है और आयत 13 में ''ठान लो'' हुआ है। रोमियों 16:17 में यह निष्कर्ष निकाले बिना कि कौन सी बात उसके विवरण से मेल खाती है, हम पौलुस की आज्ञा नहीं मान सकते। परन्तु *krino* का इस्तेमाल आमतौर पर आलोचना करते, कमियां निकालते, और/या दोष लगाते हुए किसी के विरुद्ध निर्णय देना है और यहां ऐसा ही हुआ है। 14:3 में AB के अनुवाद में कहा गया है, ''जो [मांस खाने से] परहेज करता है, वह उस पर जो खाता है, आलोचना और निर्णय न दे।''

यदि आपका मानना है कि कोई काम करना गलत है, तो किसी के साथ भी जो आपसे असहमत हो कठोर और असहिष्णु होना आसान बात है। मैंने दूसरे मसीही लोगों की कमियों की ओर ध्यान दिलाने को समर्पित पुस्तकें पढ़ी हैं। इनमें से कुछ में कठोर और न्याय करने का स्वर सुनाई देता है।

किसी भाई का न्याय करने से परहेज रखना चाहिए, ''क्योंकि परमेश्वर ने उसे ग्रहण किया

है'' (14:3ग)। जब कोई भाई मसीही बन गया तो परमेश्वर ने उसे अपनी संतान होने के लिए ग्रहण कर लिया है। ''ग्रहण किया'' का अनुवाद उसी यूनानी शब्द से किया गया है जिसका अनुवाद आयत 1 में हुआ है। इस विचार में यह संकेत मिलता है कि यदि परमेश्वर ने उसे ग्रहण कर लिया है तो हमें भी कर लेना चाहिए। जिम्मी ऐलन ने यह जोड़ते हुए कि हमें एक-दूसरे की समान देखभाल करनी चाहिए लिखा कि ''मसीह ... ने हमारा, मस्सों और सब का स्वागत किया।''[18]

पौलुस यह सुझाव नहीं दे रहा था कि हमें गैर मसीही लोगों को अपनी संगति में शामिल कर लेना चाहिए। जिन लोगों की उसने बात की, परमेश्वर ने उन्हें ग्रहण कर लिया था (आयत 3) अर्थात परमेश्वर के सेवक (आयत 4), जो प्रभु के लोग थे (आयत 8) और मसीह में भाई थे (आयत 10)।

फिर प्रेरित ने अपने पाठकों से पूछा ''तू कौन है जो दूसरे के सेवक पर दोष लगाता है?'' (आयत 4क)। ''सेवक'' (*oiketes*) शब्द का अनुवाद ''सेवक'' के लिए सामान्य शब्द से नहीं किया गया है, बल्कि यह घर (*oikos*) के लिए शब्द से लिया गया है।[19] *Oiketes* का अर्थ घरेलू नौकर है। परन्तु यदि आप किसी से काम करवाना चाहते हैं, शायद कोई भरोसेमंद काम करने वाला, जो वर्षों से आपके साथ रहा हो, और आप के घर आया कोई मेहमान आपके सेवक के काम करने के ढंग की आलोचना करने लगे? तो आप की प्रतिक्रिया क्या होगी? शायद आप अपने अतिथि को बताएंगे (बेशक, विनम्रता से) कि *उसके* विचार का नहीं, बल्कि *आपके* विचार का महत्व है। पौलुस ने कहा, ''उसका स्थिर रहना या गिर जाना उसके स्वामी ही से सम्बन्ध रखता है, बरन वह स्थिर ही कर दिया जाएगा; क्योंकि प्रभु उसे स्थिर रख सकता है'' (आयत 4ख)।

संदेश को समझना आसान है। आप और मैं परमेश्वर के सेवक हैं और एक दिन हमें अपने सेवक होने का परमेश्वर को हिसाब देना होगा (देखें आयतें 10ख-12)। परमेश्वर ही निर्णय करेगा कि ''कौन स्थिर रहे या गिर जाए।'' साथ ही आप को और मुझे एक-दूसरे का न्याय करने का कोई हक नहीं है।[20] रोमियों 12 के अपने अध्ययन में हमने देखा कि हमें बदला नहीं लेना चाहिए क्योंकि यह काम परमेश्वर का है (आयत 19)। एक अर्थ में पौलुस ने यहां कहा कि न ही हमें न्याय करना चाहिए क्योंकि यह भी परमेश्वर की ज़िम्मेदारी है। एक बार बैटसेल बैरेट बैक्सटर से पूछा गया कि बताएं कि उनके विचार से कौन व्यक्ति उद्धार पाया हुआ या खोया हुआ है। भाई बैक्सटर ने उत्तर दिया, ''आप मुझसे गलत सवाल पूछ रहे हैं। लोगों को स्वर्ग या नरक में भेजना परमेश्वर का काम है, मेरा नहीं।''[21]

पौलुस ने आत्मविश्वास की एक बात जोड़ी। यह कहने के बाद कि ''उसका स्थिर रहना या गिर जाना उसके स्वामी से ही सम्बन्ध रखता है'' उसने कहा, ''बरन वह [परमेश्वर का सेवक] स्थिर ही कर दिया *जाएगा*; क्योंकि प्रभु उसे स्थिर रख सकता है'' (14:4ग)। यह वचन मान लेता है कि प्रश्न वाला सेवक सच्चे मन से प्रभु की सेवा कर रहा है। पौलुस के कहने का अर्थ है कि चाहे उसके भाई उसे छोटा समझें या उसे स्वीकार न करें, परन्तु परमेश्वर फिर भी उसका स्वागत करता है और उसे स्थिर खड़ा कर सकता है।

ज़ोर

''बलवान'' से ''निर्बल'' को ग्रहण करने और उसे तुच्छ न जानने के लिए कहा गया। पौलुस ने यह भी संकेत दिया कि ''निर्बल'' को ''बलवान'' को ग्रहण कर लेना चाहिए (देखें 15:7) और अपने भाइयों का न्याय नहीं करना चाहिए। कोई पूछ सकता है, ''मुझे कैसे मालूम कि मैं बलवान भाई हूं या निर्बल?'' अधिकतर बलवान सोच वाले लोग अपने आपको ''बलवान'' का ठप्पा लगा लेते हैं (मैं केवल एक घटना को याद कर सकता हूं जब मैंने किसी मसीही से अपने आपको ''कमज़ोर भाई'' कहते सुना)। एक-दूसरे को ग्रहण करने के सम्बन्ध में, अधिकतर मुद्दों पर इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप ''बलवान'' हैं या ''निर्बल।'' (अपने वचन पाठ में आगे आप देखेंगे कि ''बलवान'' पर ज़िम्मेदारी अधिक है।) ''बलवान'' हों या ''निर्बल'' संदेश हर मसीही के लिए एक ही है ''*एक-दूसरे को ग्रहण करो*'' (देखें 15:7)।

सारांश

इस भाग में पौलुस ने मसीही लोगों के एक-दूसरे से असहमत होने पर व्यवहार के ढंग पर सिखाते हुए आरम्भ किया। उम्मीद है कि इसमें से कम से कम दो सबक आपके लिए हैं। पहला तो रोमियों 14:1-15:13 है जो बताता है कि *विचार* के मामलों में असहमत होने पर हमें कैसे व्यवहार करना चाहिए। अन्य परिस्थितियों के लिए प्रासंगिकता बनाई जा सकती है, परन्तु यह न भूलें कि फोकस विचार के मामलों पर है। दूसरा, इस और अगले पाठ के लिए वचन में ज़ोर मसीह में अपने भाइयों और बहनों को और *ग्रहण करने* वाले होना सीखने पर है। हमें उनके लिए जो हमारे साथ सहमत नहीं हैं *सम्मान* दिखाना आवश्यक है। ''देखो, यह क्या ही भली और मनोहर बात है कि भाई लोग आपस में मिले रहें!'' (भजन संहिता 133:1)।

प्रचारकों तथा सिखाने वालों के लिए नोट्स

यह प्रस्तुति और ''एक-दूसरे का न्याय न करें'' एक ही पाठ के दो भाग हैं।

टिप्पणियां

[1]क्योंकि रोमियों 14 यहूदियों और अन्यजातियों का उल्लेख नहीं करता, जिस कारण आप को आश्चर्य हो सकता है कि उस अध्याय के अधिकतर मुद्दों को यहूदियों बनाम अन्यजातियों को देखने की क्या आवश्यकता है। चर्चा के अन्त में पौलुस ने ''निर्बल'' और ''बलवान'' की बात करना बन्द करके यहूदियों और अन्यजातियों की बात की (देखें 15:8-12)। [2]जो लोग इस बात को मानते हैं, वे 14:13 की ओर ध्यान दिलाते हैं, जहां पौलुस ने कहा कि ''आगे को हम एक दूसरे पर दोष न लगाएं।'' वे निष्कर्ष निकालते हैं कि यह शब्दावली पौलुस के इस ज्ञान का संकेत देती है कि रोम में मसीही लोग कालांतर में दोष लगाने के दोषी थे। परन्तु ध्यान दें कि पौलुस ने ताड़ना में *अपने आपको* शामिल किया। (''आगे को हम एक दूसरे पर दोष न *लगाएं*''), जो सकेत देता है कि निर्देश सबके लिए है। [3]''कोशर'' (''उचित'' के लिए इब्रानी शब्द से) का अर्थ यहूदी व्यवस्था के अनुसार भोजन तैयार करना है। [4]कई बार सुना जाने वाला शब्द ''vegen'' है: जो व्यक्ति मांस, दूध से बनी चीज़ें या अण्डे आदि नहीं खाता। अधिक प्रचलित शब्द ''शाकाहारी'' है। [5]रिचर्ड ए. बेटे, *द लैटर ऑफ़ पॉल टू दि रोमन्स,* दि लिविंग वर्ड कमैंट्री (आस्टिन, टैक्सस: आर. बी. स्वीट कं., 1969), 165. [6]कई अनुवादों तथा संस्करणों में रोमियों 14 में ''विचार'' या ''विचारों'' शब्द का इस्तेमाल

किया गया है। उदाहरण के लिए आयत 5 में JB ''हर किसी को अपना विचार रखने की छूट होनी आवश्यक है।'' [7]ज्योफ्री डब्ल्यू. ब्रोमिले, *थियोलॉजिकल डिक्शनरी ऑफ़ द न्यू टैस्टामेंट,* संपा. गरहर्ड किट्टल एंड गरहर्ड फ्रैडरिच, अनु, ज्योफ्री डब्ल्यू. ब्रोमिले, abr. (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1985), 156 में जी. सचरेंक, *''dialogismos. ''*[8]इस अवधारणा को लेखकों द्वारा सदियों से विभिन्न ढंगों में व्यक्त किया जाता है। सबसे आरम्भिक लेखकों में से एक अगस्टिन था। (वोरन डब्ल्यू. वियर्सबे, *दि बाइबल एक्पोज़िशन कमैंट्री,* अंक. 1 [व्हीटन, इलिनोइस: विक्टर बुक्स, 1989], 559.) [9]डग्लस जे. मू. *रोमन्स,* दि NIV एप्लीकेशन कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: जौंडरवन पब्लिशिंग हाउस, 2000), 453. [10]*कुछ* आधुनिक प्रासंगिकताओं का इस्तेमाल किए बिना रोमियों 14:1–4 की चर्चा करना लगभग सम्भव है। मैंने उन उदाहरणों से मेल करने की कोशिश की है, जिन्हें आमतौर पर वहां जहां मैं रहता हूं, विचार के क्षेत्र में माना जाता है। यदि इस प्रचार में मैं असफल रहता हूं तो मैं पहले से क्षमा मांग लेता हूं।

[11]*रोमियों, 1* पुस्तक में ''मुख्य बात (1:16, 17)'' पाठ में पृष्ठ 51 पर विश्वास के लिए ''believe और ''faith'' पर नोट्स देखें। [12]कई लेखक तथा वक्ता हंसी की बात जोड़ देते हैं: ''उन्हें लगा कि किसी तरह मांस मूर्तियों के कीटाणुओं से दूषित हो गया है।'' [13]कई अनुवादों तथा संस्करणों में अध्याय 14 में बाद में ''विवेक'' शब्द का इस्तेमाल किया गया है। उदाहरण के लिए, NEB में आयत 22 में ''विवेक'' है; AB में आयतें 20, 21 और 23; और फिलिप्स में 20 और 23 आयतों में। [14]डब्ल्यू. ई. वाइन, मैरिल एफ. अंगर एंड विलियम व्हाइट, जूनि., *वाइन'स कम्पलीट एक्सपोज़िस्टरी डिक्शनरी ऑफ़ ओल्ड एण्ड न्यू टैस्टामेंट वर्ड्स* (नैशविल्ले: थॉमस नेल्सन पब्लिशर्स, 1985), 511. [15]वही, 163. [16]जैसा कि इस पद्य में कहा गया है, रोमियों 14 की अन्य आयतों में यूनानी धर्मशास्त्र में *krino* (''न्याय'') के रूप हैं। चाहे हिन्दी में ''न्याय'' शब्द नहीं मिलता। [17]वाइन, 336. [18]जिम्मी एलन, *रोमन्स, दि क्लीयरसट गॉस्पल ऑफ़ ऑल* (सरसी, आरकैंसा: लेखक द्वारा, 2005), 287. [19]वाइन, 562. [20]यह अन्य स्थानों में पौलुस के विचार को नकारता नहीं है: कई बार हमें शिक्षा समबन्धी गलतियों (रोमियों 16:17) और नैतिकता सम्बन्धी गलती (1 कुरिन्थियों 5) का निर्णय करना है।

[21]मैंने बैरेट बैक्टसर को अबिलेन क्रिश्चियन कॉलेज में लगभग 1955 में इसे मिलाते हुए सुना।